NEW ERA AGRICULTURE MAGAZINE

प्राकृतिक रेशों का पुनरुत्थान: जूट, भांग एवं बाँस वस्त्र

वैशाली सिंह, रश्मी दुबे एवं साक्षी

भूमिका

बीसवीं शताब्दी में सिंथेटिक रेशों (पॉलिएस्टर, नायलॉन, ऐक्रेलिक) के तीव्र विस्तार ने वस्त्र उद्योग की दिशा बदल दी, परंतु इसके साथ ही पर्यावरण प्रदूषण, माइक्रोप्लास्टिक संदूषण एवं गैर-नवीकरणीय संसाधनों पर निर्भरता जैसी गंभीर समस्याएँ भी उत्पन्न हुईं। इक्कीसवीं सदी में जलवायु परिवर्तन एवं सतत विकास (Sustainable Development) की चिंताओं ने विश्व भर में प्राकृतिक एवं जैव-निम्नीकरणीय (biodegradable) रेशों की ओर पुनः रुझान उत्पन्न किया है। इस संदर्भ में जूट, भांग (हेम्प) और बाँस — तीनों पारंपरिक किंतु आज लगभग उपेक्षित रेशे — नए सिरे से वैश्विक एवं भारतीय वस्त्र उद्योग के केंद्र में आ रहे हैं। ये तीनों रेशे न केवल पर्यावरण-अनुकूल हैं, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं किसानों की आजीविका के लिए भी महत्वपूर्ण संभावनाएँ प्रस्तुत करते हैं।

जूट: 'सुनहरा रेशा' (Golden Fibre)

भारत विश्व में जूट का सबसे बड़ा उत्पादक देश है, यद्यपि वैश्विक जूट निर्यात में बांग्लादेश का हिस्सा लगभग तीन-चौथाई है जबकि भारत का हिस्सा लगभग 7 प्रतिशत है। जूट की खेती मुख्यतः पश्चिम बंगाल, बिहार, ओडिशा, असम, आंध्र प्रदेश, मेघालय एवं त्रिपुरा में गंगा-ब्रह्मपुत्र डेल्टा की उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी में होती है। वर्ष 2022-23 में जूट उत्पादों का कुल उत्पादन लगभग 12,46,500 मीट्रिक टन रहा, जिसमें से निर्यात लगभग 1,77,270 मीट्रिक टन तक पहुँचा — यह वर्ष 2019-20 की तुलना में लगभग 56 प्रतिशत की उल्लेखनीय वृद्धि है। विश्व भर में पर्यावरण-अनुकूल एवं सतत उत्पादों की बढ़ती मांग को इस वृद्धि का प्रमुख कारण माना जाता है। जूट से पारंपरिक बोरियों एवं रस्सियों के अतिरिक्त अब बैग, कालीन, होम फर्निशिंग, फैशन परिधान तथा जियो-टेक्सटाइल जैसे उच्च-मूल्य उत्पाद भी बनाए जा रहे हैं, जिससे इसकी आर्थिक उपयोगिता और बढ़ी है। जूट पैकेजिंग सामग्री (अनिवार्य उपयोग) अधिनियम इस क्षेत्र से जुड़े किसानों एवं श्रमिकों के हितों की सुरक्षा करता है।

भांग (हेम्प): पहाड़ों का उपेक्षित खजाना

भांग (Industrial Hemp) का पौधा सदियों से हिमालयी क्षेत्रों में स्थानीय समुदायों द्वारा वस्त्र, रस्सी एवं जूते बनाने हेतु उपयोग किया जाता रहा है, परंतु वर्ष 1985 में मादक पदार्थों पर अंतरराष्ट्रीय प्रतिबंध की नीति के अंतर्गत भांग की खेती पर भी व्यापक रोक लगा दी गई, जिससे यह परंपरागत उपयोग लगभग समाप्त हो गया। हेम्प रेशा और मादक कैनबिस (चरस-गांजा) रासायनिक रूप से भिन्न होते हैं, फिर भी नियामक भ्रम के कारण औद्योगिक हेम्प का उपयोग लंबे समय तक बाधित रहा। वर्तमान में उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों ने लाइसेंस-आधारित नियंत्रित खेती की नीति अपनाकर औद्योगिक हेम्प को पुनः वैध

वैशाली सिंह, रश्मी दुबे एवं साक्षी
वस्त्र एवं परिधान विज्ञान विभाग
सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय
चन्द्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

दर्जा देना आरंभ किया है। हिमाचल प्रदेश की 'ग्रीन टू गोल्ड' पहल के अंतर्गत भांग से टी-शर्ट, थैले, रस्सियाँ, परंपरागत जूते-चप्पल, कागज़ एवं पर्यावरण-अनुकूल निर्माण सामग्री तैयार करने की योजना है। हेम्प रेशा अत्यंत मजबूत, जीवाणुरोधी (antimicrobial) एवं यूवी-प्रतिरोधी होता है तथा इसकी खेती में कपास की तुलना में काफी कम जल एवं कीटनाशकों की आवश्यकता होती है, जिससे यह पहाड़ी किसानों के लिए स्थायी आजीविका का साधन बन सकता है।

बाँस वस्त्र: तीव्र वृद्धि वाला सतत रेशा

बाँस से प्राप्त रेशा बाँस की घास के गूदे (pulp) से तैयार किया जाता है और यह मुलायम, टिकाऊ एवं बहुउपयोगी वस्त्र सामग्री के रूप में जाना जाता है। बाँस की सबसे बड़ी विशेषता इसकी तीव्र वृद्धि दर है — यह बिना पुनः रोपण के स्वयं पुनर्जीवित हो जाता है, जिससे इसकी खेती के लिए न्यूनतम भूमि, जल एवं रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता होती है। अपने संपूर्ण जीवन-चक्र में यह पर्यावरण-अनुकूल बना रहता है और उपयोग के बाद यह पूर्णतः जैव-निम्नीकरणीय (biodegradable) एवं खाद-योग्य (compostable) भी है। भारत में झारखंड (सरायकेला-खरसावाँ), ओडिशा (मयूरभंज, कोरापुट) सहित पूर्वोत्तर राज्यों में बाँस शिल्प की समृद्ध परंपरा रही है, जिसे अब वस्त्र एवं फैशन क्षेत्र से जोड़कर नई पहचान दी जा रही है। बाँस के रेशे से बने वस्त्र नमी सोखने (moisture-wicking), जीवाणुरोधी एवं त्वचा के अनुकूल गुणों के कारण स्वास्थ्यकर वस्त्रों, बच्चों के परिधान एवं खेल-वस्त्रों में विशेष रूप से लोकप्रिय हो रहे हैं।

पुनरुत्थान की आवश्यकता क्यों?

- **पर्यावरण संरक्षण:** वैश्विक वस्त्र एवं परिधान क्षेत्र का कुल वैश्विक कार्बन उत्सर्जन में लगभग 6-8 प्रतिशत योगदान है, तथा वस्त्र उत्पादन एवं रंगाई वैश्विक जल प्रदूषण में लगभग 20 प्रतिशत का योगदान करते हैं — प्राकृतिक रेशे इस प्रभाव को काफी हद तक कम कर सकते हैं।
- **जैव-निम्नीकरणीयता:** सिंथेटिक रेशों के विपरीत जूट, हेम्प एवं बाँस के वस्त्र प्राकृतिक रूप से विघटित हो जाते हैं, जिससे माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण की समस्या नहीं होती।
- **कम जल एवं रासायनिक खपत:** इन तीनों रेशों की खेती में कपास जैसी परंपरागत नकदी फसलों की तुलना में काफी कम सिंचाई एवं कीटनाशकों की आवश्यकता होती है।
- **ग्रामीण एवं जनजातीय आजीविका**: पूर्वी भारत के जूट किसान, हिमालयी क्षेत्र के हेम्प उत्पादक एवं पूर्वोत्तर व मध्य भारत के बाँस शिल्पकार — तीनों समुदायों के लिए ये रेशे स्थायी आय का स्रोत बन सकते हैं।
- **वैश्विक बाजार की मांग:** सतत फैशन (Sustainable Fashion) की बढ़ती वैश्विक मांग के कारण प्राकृतिक रेशों से बने उत्पादों का निर्यात एवं मूल्य दोनों में वृद्धि हो रही है।

चुनौतियाँ

- **जूट:** बांग्लादेश जैसे प्रतिस्पर्धी देशों की तुलना में कम वैश्विक बाजार-हिस्सेदारी, पुरानी मिल-तकनीक एवं सीमित उत्पाद विविधीकरण।
- **भांग:** मादक कैनबिस से भ्रमित किए जाने के कारण जटिल एवं राज्य-दर-राज्य भिन्न कानूनी प्रावधान, लाइसेंसिंग प्रक्रिया की जटिलता, तथा प्रसंस्करण अवसंरचना का अभाव।
- **बाँस:** संगठित वस्त्र-स्तरीय प्रसंस्करण इकाइयों (fibre-extraction mills) की कमी, तथा

कुछ 'बाँस वस्त्र' उत्पादों में रासायनिक विस्कोस प्रक्रिया के उपयोग से वास्तविक पर्यावरणीय लाभ पर प्रश्नचिह्न।

- **तीनों रेशों के लिए सामान्य चुनौती** — उपभोक्ता जागरूकता की कमी, उच्च आरंभिक लागत, तथा सिंथेटिक व कपास वस्त्रों से मूल्य-प्रतिस्पर्धा।

आगे की राह: सुझाव

- हेम्प की खेती हेतु राष्ट्रीय स्तर पर एक स्पष्ट एवं एकसमान नीति बनाई जाए, जिससे राज्यों के बीच नियामक भ्रम समाप्त हो।
- जूट एवं बाँस प्रसंस्करण इकाइयों के आधुनिकीकरण एवं तकनीकी उन्नयन हेतु निवेश बढ़ाया जाए।
- डिज़ाइन संस्थानों एवं वस्त्र वैज्ञानिकों को इन रेशों पर शोध व नवाचार (जैसे रेशा-मिश्रण, कोमलता में सुधार) हेतु प्रोत्साहित किया जाए।
- किसानों एवं शिल्पकारों को प्रत्यक्ष बाजार पहुँच, उचित मूल्य एवं प्रशिक्षण उपलब्ध कराया जाए।
- उपभोक्ताओं में प्राकृतिक रेशों के पर्यावरणीय एवं स्वास्थ्य-लाभों के प्रति जागरूकता अभियान चलाए जाएँ।

निष्कर्ष

जूट, भांग एवं बाँस — ये तीनों रेशे भारत की मिट्टी, जलवायु एवं परंपरा से गहराई से जुड़े हुए हैं, फिर भी आधुनिक औद्योगिक दौर में हाशिये पर चले गए। सतत विकास एवं पर्यावरण-संरक्षण की वैश्विक आवश्यकता के इस दौर में इनका पुनरुत्थान न केवल पारिस्थितिक दृष्टि से अनिवार्य है, बल्कि यह ग्रामीण एवं पर्वतीय अर्थव्यवस्थाओं को सशक्त बनाने का भी एक सशक्त माध्यम है। उचित नीति-समर्थन, तकनीकी नवाचार एवं उपभोक्ता जागरूकता के समन्वित प्रयासों से ये पारंपरिक प्राकृतिक रेशे भारतीय वस्त्र उद्योग के भविष्य की नई नींव बन सकते हैं।

संदर्भ (References)

1. Drishti IAS (2025) — 'जूट उद्योग का विकास और संवर्द्धन', drishtiias.com
2. Drishti IAS — 'जूट उद्योग', drishtiias.com/hindi/daily-news-analysis/jute-industry
3. Next IAS (2024) — 'भारत में जूट उद्योग: खेती, उत्पादन, वितरण', nextias.com
4. Drishti IAS (2025) — 'भारत का वस्त्र उद्योग', drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-analysis/india-s-textile-industry
5. ETV भारत (2024) — 'बदनाम नहीं वरदान है हिमालय की भांग', etvbharat.com
6. अमर उजाला (2026) — 'Himachal Cannabis: भांग से बनेंगी पुलें, टी-शर्ट और थैले', amarujala.com
7. Appropedia — 'बांस का कपड़ा', appropedia.org/Bamboo_fabric/hi
8. India Heritage Haat — 'बाँस शिल्प', झारखंड-ओडिशा ब्रोशर, indiaheritagehaat.com